दूसरी नज़र

■ पी चिदंबरम

शोक, गुस्सा और नासमझी

जनवरी 2000 में मसूद अजहर की रिहाई के बाद से जो झटके लगने शुरू हुए, वे जारी हैं। भारत के लोगों को ऐसा हर झटका उस बड़े झटके की याद दिलाता है जब भाजपा के नेतृत्व वाली एनडीए सरकार ने बंधक बना लिए गए आइसी-184 उड़ान के यात्रियों और चालक दल के सदस्यों की रिहाई के बदले मसूद अजहर को छोड़ने का फैसला किया था। मसूद अजहर और दो अन्य को काबुल ले जाते और इन्हें उनके आतंकी साथियों के हवाले करते हुए विदेश मंत्री जसवंत सिंह की जो तस्वीरें आई थीं, वे आज भी उन दर्दनाक क्षणों की याद दिलाती हैं।

इसके तत्काल बाद मसूद अजहर ने जैश-ए-मोहम्मद की स्थापना की। जैश ने अपना पहला हमला 19 अप्रैल, 2000 को श्रीनगर में सेना की पंद्रहवीं कोर पर किया था और यह आत्मघाती हमला था। तबसे जैश ने संसद, श्रीनगर में जम्मू-कश्मीर विधानसभा परिसर और कुपवाड़ा तथा बारामुला जिलों सहित कई ठिकानों को अपना निशाना बनाया।

घुसपैठ और भर्ती

जैश-ए-मोहम्मद दो स्तरों पर काम करता है। पहला तो यह कि भारतीय क्षेत्र में आतंकियों को घुसा कर खास ठिकानों पर हमले करवाना। पठानकोट, उड़ी और नगरोटा के हमले इसके उदाहरण हैं। दूसरा यह कि स्थानीय स्तर पर नौजवानों की भर्ती कर उन्हें आत्मघाती हमलावरों के रूप में इस्तेमाल करना। इसका उदाहरण आदिल अहमद डार है, जिसने 14 फरवरी, 2019 को सीआरपीएफ के काफिले में अपनी एसयूवी घुसा दी और उसे उड़ा दिया, जिसमें चालीस जवान मारे गए।

हैरान करने वाला तथ्य यह है कि 2015 से घुसपैठियों और स्थानीय स्तर पर भर्ती होने वाले नौजवानों की संख्या लगातार बढ़ रही है। (देखें सारणी)

क्रम संख्या	वर्ष	घुसपैठ की कोशिशें	घुसपैठियों की संख्या	आतंकी बनने वाले नौजवानों की संख्या
1	2013	277	97	16
2	2014	222	65	53
3	2015	121	33	66
4	2016	371	119	88
5	2017	419	136	126
6	2018	284	128	164
			(अक्तूबर तक)	(अक्तूबर तक)

स्रोत- राज्यसभा सवाल-जवाब, 27 मार्च 2017 और 12 दिसंबर 2018

जम्मू-कश्मीर के बारे में मेरे विचार जगजाहिर हैं। पाकिस्तान में 'सत्ता प्रतिष्ठान', कमजोर सरकार और सेना, जिसने कोई सबक नहीं सीखा है, ने जम्मू-कश्मीर को तबाह किया है और पाकिस्तान की आर्थिकी की कब्र खोद डाली है। साथ ही, मैं भाजपा के नेतृत्व वाली एनडीए सरकार के बाहुबल, सैन्य और अतिवादी नीति का भी कड़ा विरोध करता रहा हूं, जिसने जम्मू-कश्मीर के लोगों का उत्पीड़न किया है।

राष्ट्र का अहित

एनडीए सरकार ने भारत को कई मामलों में नाकाम बना डाला, लेकिन राष्ट्रीय सुरक्षा को उतना खतरा किसी से नहीं हुआ, जितना कि जम्मू-कश्मीर पर सरकार की अनर्थकारी नीति से हुआ। 13 मई, 2018 को इस स्तंभ में मैंने लिखा था कि 'एक राष्ट्र के रूप में भारत अपनी एकता, अखंडता, बहुलबाद, धार्मिक सहिष्णुता, लोगों के प्रति जवाबदेह सरकार, मतभेदों को सुलझाने के लिए वार्ता आदि के लिए जाना जाता है और जम्मू-कश्मीर में ये सब कसौटी पर हैं। एक राष्ट्र के रूप में भारत इस कसौटी पर खरा नहीं उतर रहा है।'

पुलवामा के बाद सरकार और अति-राष्ट्रवादी एक ऐसा राक्षस खड़ा कर रहे हैं, जिसे चुनावों में मार डालना है। और इन लोगों ने ऐसा किया भी है। जम्मू और भारत के दूसरे शहरों में कश्मीरी व्यापारियों और छात्रों पर हमले किए गए। कश्मीरी छात्रों को हॉस्टलों से बाहर कर दिया गया। उत्पीड़न के तौर पर सोशल मीडिया पर उनके खिलाफ पोस्ट डाले गए। पाकिस्तान को किए जाने वाले निर्यात पर और उसके साथ होने वाले मैचों पर भी प्रतिबंध लगाने की चिल्ला-चिल्ला कर मांग की गई। मेघालय के राज्यपाल, जिन्होंने संविधान की रक्षा की शपथ ली थी, ने तो यहां तक कह डाला कि 'कश्मीर न जाएं, अमरनाथ न जाएं, कश्मीरी व्यापारियों का बनाया हुआ सामान न खरीदें, जो हर साल सर्दियों में अपना माल बेचने यहां आते हैं।' ये साफ-साफ युद्ध के नगाड़े का शोर है।

चालीस जवानों को खोने से हम गमजदा हैं और दुख की इस घड़ी में उनके परिवारों के साथ हैं। लेकिन शोर और उन्माद के बीच हम ये प्रासंगिक सवाल पूछने में नाकाम रहे हैं कि- राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए जिम्मेदार कौन है? क्या यह खुफिया नाकामी थी? क्या दो हजार से ज्यादा जवानों को एक ही काफिले में भेजने का फैसला गंभीर चूक थी? क्यों बाईस साल के नौजवान आदिल डार ने चालीस जवानों को मार डाला और अपने को भी खत्म कर लिया? जब तक हम इन सवालों को नहीं पूछते हैं और इनके जवाब नहीं तलाशते हैं, तो हम इतिहास को दोहराने से नहीं रोक पाएंगे।

समझदारी की बात

और लोग भी सवाल पूछ रहे हैं, उनका आभार।

– रिटायर लेफ्टिनेंट जनरल हसनैन ने लिखा है : 'भारत अपने रणनीतिक लक्ष्यों को तब तक हासिल नहीं कर सकता जब तक कि कश्मीरियों को निशाना बनाया जाता रहेगा, उनका उत्पीड़न किया जाता रहेगा और सोशल मीडिया पर अल्पसंख्यकों को लेकर नफरत फैलाई जाती रहेगी।'

– रिटायर लेफ्टिनेंट जनरल हुड्डा ने एक इंटरव्यू में कहा : 'कश्मीर समस्या को लेकर हमें आंखें नहीं मूंदनी चाहिए, आखिरकार जिस आतंकी ने ये किया वह स्थानीय आतंकी था... इसलिए समस्या अपने भीतर की ही है।'

– पूर्व विदेश सचिव श्यामा सरन ने लिखा कि 'कश्मीर को बाकी भारत से अलग नहीं किया जा सकता और अलग-थलग पड़ गई इसकी आबादी को कड़े सुरक्षा उपायों से नियंत्रित नहीं किया जा सकता है... कश्मीर पर हमें एक ऐसी रणनीति की जरूरत है जिसमें कश्मीर मामले से जुड़े देशी और बाहरी आयामों का खयाल रखा जा सके।'

– पूर्व आइपीएस अधिकारी जूलियो फ्रांसिस रिबेरो ने लिखा : 'अगर उस समुदाय, जिससे कि आतंकवादी आते हैं, पर काबू नहीं पाया गया, तो आतंकवादियों को अपने सह-धर्मियों से लगातार ऑक्सीजन मिलती रहेगी और होगा यह कि एक आतंकवादी मरा तो दूसरा-तीसरा खड़ा हो जाएगा जो कि भावनात्मक रूप से प्रभावित रहा होगा।'

जब ये बातें उठ रही थीं, सेना के प्रवक्ता अपनी हमेशा की भाषा बोल रहे थे- 'चिनार कोर के कोर कमांडर लेफ्टिनेंट जनरल कंवलजीत सिंह ढिल्लों ने 19 फरवरी, 2019 को चेतावनी दी कि कश्मीर में जिस किसी ने भी बंदूक उठाई है, अगर वह हथियार नहीं डालता है, तो उसका सफाया कर दिया जाएगा।'

लेकिन लोगों के बढ़ते गुस्से और हताशा के बीच हम उम्मीद नहीं छोड़ सकते। सबसे बुरा और चिंताजनक तो यह है कि मौजूदा सरकार जो कर सकती है वह यह कि देश को एक और ऐसे जोखिम में धकेल देगी, जिससे लोगों में और अविश्वास पनपेगा, जम्मू-कश्मीर में लोग और भड़केंगे, और ज्यादा जानें जाएंगी और हम समाधान से और दूर हो जाएंगे। हालांकि मुझे भरोसा है कि इस तरह की समझदारी वाली आवाजें उठती रहेंगी और भविष्य की सरकार बेहतर समझ दिखाएगी, नेतृत्व बुद्धिमत्तापूर्ण होगा और राजनीतिक समाधान के लिए गंभीरता से काम होगा।

ग्रामीण महिलाओं की दशा

रवि शंकर

महिलाओं को ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ कहा जाता है। विकासशील देशों में इनकी भूमिका और महत्त्वपूर्ण है। पूरी दुनिया में कृषि क्षेत्र में ग्रामीण महिलाओं का अहम योगदान है। वे परिवार, समाज, समुदाय की सार्थक अंग हैं। जो समाज के स्वरूप को सशक्त रूप से प्रभावित करती हैं। क्योंकि महिलाएं राष्ट्र के विकास में पुरुषों के बराबर ही महत्त्व रखती हैं। हमारे देश की सत्तर प्रतिशत आबादी आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है। उनमें से अधिकांश कृषि कार्यों पर निर्भर हैं। यही वजह है कि ग्रामीण महिलाएं गृहकार्य तथा बच्चों को संभालने के साथ-साथ खेती के कामों में भी हाथ बंटाती हैं। गौरतलब है कि भारत के सकल घरेलू उत्पाद में महिलाओं का योगदान मात्र सत्रह प्रतिशत है, जो कि वैश्विक औसत सैंतीस प्रतिशत के आधे से भी कम है। फिर भी विश्व बैंक की एक रिपोर्ट के अनुसार अगर महिलाओं का श्रम में योगदान बढ़ जाए तो भारत की विकास दर दहाई की संख्या में होगी। इससे गरीबी को तेजी से कम किया जा सकता है।

भारत के कृषि क्षेत्र में कुल श्रम की साठ से अस्सी प्रतिशत हिस्सेदारी ग्रामीण महिलाओं की है। जबकि खाद्य एवं कृषि संगठन के आंकड़ों पर गौर करें तो कृषि क्षेत्र में कुल श्रम में ग्रामीण महिलाओं का योगदान तिरालीस प्रतिशत है, वहीं कुछ विकसित देशों में यह आंकड़ा सत्तर से अस्सी प्रतिशत है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद और डीआरडब्ल्यूए के नौ राज्यों में किए गए एक शोध से पता चलता है कि प्रमुख फसलों की पैदावार में महिलाओं की भागीदारी पचहत्तर प्रतिशत तक रही है। इतना ही नहीं, बागवानी में यह आंकड़ा उन्यासी प्रतिशत और फसल कटाई के बाद के कार्यों में इक्यावन प्रतिशत तक है। पशुपालन में महिलाओं की भागीदारी अट्ठावन प्रतिशत और मछली उत्पादन में पंचानबे प्रतिशत तक है। यानी कहा जा सकता है कि विकासशील देशों में खेती का तकरीबन आधा काम महिलाओं द्वारा किया जाता है और इस मामले में भारत अपवाद नहीं है। फिर भी कृषि विकास के लिए रणनीतियां मुख्य रूप से पुरुषों को केंद्र में रख कर बनाई जाती हैं। बमुश्किल पांच फीसद संसाधन महिलाओं को ध्यान में रख कर खर्च किए जाते हैं और इस दिशा में कोशिशें भी नहीं होतीं। इससे कृषि उत्पादन को भी भारी नुकसान होता है।

खाद्य एवं कृषि संगठन के एक अध्ययन के मुताबिक अगर महिलाओं को पुरुषों के बराबर परिसंपत्तियां, कच्चा माल और सेवा जैसे संसाधन मिलें, तो समस्त विकासशील देशों में कृषि उत्पादन ढाई से चार फीसद तक बढ़ सकता है। इससे भूखे लोगों की तादाद को बारह से सत्रह फीसद तक कम किया जा सकता है। इससे लोगों की आमदनी भी बढ़ती, जिससे जीवन स्तर और जीवन सुरक्षा में भी इजाफा होता।

आर्थिक सर्वेक्षण 2017-18 के अनुसार पुरुषों का रोजगार के लिए गांवों से शहरों की तरफ पलायन होने के कारण कृषि कार्य में महिलाओ की भूमिका बढ़ रही है। इसलिए महिलाओं की कृषि कार्य में हिस्सेदारी बढ़ी है। वहीं आज की वर्तमान चुनौती जैसे कि जलवायु परिवर्तन और प्राकृतिक संसाधनों का क्षरण रोकने और प्रबंधन में महिलाओं के योगदान को नकारा नहीं जा सकता। महिलाएं कृषि में बहुआयामी भूमिका निभाती आ रही हैं। बुवाई से लेकर रोपाई, निराई, सिंचाई, उर्वरक डालना, पौध संरक्षण, कटाई, भंडारण आदि सभी प्रक्रियाओं से वे जुड़ी हुई हैं। इसके अलावा वे कृषि संबंधी अन्य धंधों जैसे, मवेशी पालन, चारे का संग्रह, दुग्ध और कृषि से जुड़ी सहायक गतिविधियों जैसे मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पादन, सूकर पालन, बकरी पालन, मुर्गी पालन आदि में भी सक्रिय रहती हैं। साफ है, अगर महिलाओं को अच्छा अवसर तथा सुविधा मिले तो वे देश की कृषि को द्वितीय हरित क्रांति की तरफ ले जाने के साथ देश के विकास का परिदृश्य भी बदल सकती हैं।

एक ओर जहां शहरी महिलाएं स्कूलों, कॉलेजों, दफ्तरों, कारखानों आदि में पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिला कर देश के विकास में संलग्न हैं, वहीं दूसरी ओर ग्रामीण महिलाएं खेत-खलिहानों में काम करके देश के आर्थिक विकास में अपना अमूल्य योगदान देती रहीं है। इसके बावजूद समाज में महिलाएं पुरुष से हेय समझी जाती हैं। इतिहास इस बात का साक्षी है कि महिला पुरुष की तुलना में अपने अधिकारों के संदर्भ में सदा उपेक्षित रही हैं, इसीलिए हर समाज में महिलाओं के साथ शोषण, अन्याय और अत्याचार होता रहा है। खासकर ग्रामीण क्षेत्र की महिलाएं और भी अधिक उपेक्षित हैं। देश की कुल आबादी की लगभग सत्तर प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है, जो घोर अशिक्षा, अंधविश्वास और रूढ़ियों से ग्रस्त हैं। देश के विकास में ग्रामीण भारत की महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने की आवश्यकता है। अगर भारत में महिला वर्ग की आधी से ज्यादा इस आबादी का विकास नहीं हुआ, तो देश और समाज का विकास नहीं हो सकता।

यह ठीक है कि महिला सशक्तिकरण के मामले में भारत की स्थिति कई मायनों में बेहद अनूठी है। यहां ग्राम पंचायतों में एक तिहाई स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित हैं। विधानसभाओं और संसद में भी यही व्यवस्था करने की तैयारी है। फिर भी यह राजनीतिक सशक्तिकरण सामान्य तौर पर ग्रामीण महिलाओं के सामाजिक-आर्थिक ढांचे में पर्याप्त बदलाव नहीं ला पाया है। यही वजह है कि कृषि उद्यम में महिलाओं की भागीदारी होने के बावजूद उन्हें समाज और राज्य से उतना सम्मान नहीं मिलता, जिसकी वे हकदार हैं। हर दृष्टि से वे उपेक्षा की शिकार हैं। यों कहें, ग्रामीण सामाजिक-आर्थिक ढांचे में अब भी पुरुषों का दबदबा है। स्वास्थ्य एवं पोषण सबसे बड़ी चिंताएं हैं। महिलाएं ही पूरे घर के लिए खाना बनाती हैं, पर वे अमूमन भूखी रह जाती हैं। भारत में महिलाओं में कुपोषण के मामले तकरीबन उतने ही ज्यादा हैं, जितने कुछ अफ्रीकी देशों में खाद्य संकट के मामले हैं। बराबर कृषि कार्य के लिए उन्हें पुरुषों को दी जाने वाली मजदूरी की तुलना में कम मेहनताना दिया जाता है। जमीन का मालिकाना हक भी सामान्य तौर पर पुरुषों के नाम होता है। खेती से जुड़े अधिकतर फैसले पुरुषों द्वारा लिए जाते हैं। यह बात गौर करने लायक है कि संपूर्ण सामाजिक व्यवस्था कुछ ऐसी है कि स्त्री को उसके किए गए हर कार्य के लिए यह बताया जाता है कि उसका श्रम, 'श्रम' नहीं, घरेलू सहयोग मात्र है और यही कारण है कि अधिकतर महिलाएं जो कृषिकार्य में संलग्न हैं, खुद भी मानती हैं कि वे कोई कार्य नहीं करतीं।

भारत के गांवों को बचाने के लिए खेती को बचाना आवश्यक है, और खेती बचाने के लिए महिलाओं को साधन संपन्न बनाना भी उतना ही आवश्यक है। सरकारी नियमों के हिसाब से अभी किसान केवल वही माने जाते हैं, जिनके नाम से जमीन होती है, ऐसे में कितनी ही महिलाएं किसान के रूप में पहचानी जाने से वंचित रह जाती हैं। आंकड़े यह भी बताते हैं कि अगर महिला किसानों को कृषि कार्य में समान अधिकार हासिल होगा, तो उत्पादन में चालीस फीसद तक की बढ़ोतरी हो सकती है। साथ ही, वे आर्थिक रूप से स्वावलंबी बनेंगी और समाज को भी आगे ले जा सकेंगी। कहा जाता है कि जब आप गांव में एक महिला को सामाजिक और आर्थिक रूप से सशक्त तथा समृद्ध बनाते हैं तो वह महिला न केवल अपने परिवार को, अपने गांव को, बल्कि अपने देश को सुदृढ़ बनाती है। यही मूल कारण बनता है देश के विकास और अर्थव्यवस्था में सुधार का। ऐसे में जरूरत है दृढ़ राजनीतिक इच्छाशक्ति की।

मुद्दा

> भारत के गांवों को बचाने के लिए खेती को बचाना आवश्यक है, और खेती बचाने के लिए महिलाओं को साधन संपन्न बनाना भी उतना ही आवश्यक है। सरकारी नियमों के हिसाब से अभी किसान केवल वही माने जाते हैं, जिनके नाम से जमीन होती है, ऐसे में कितनी ही महिलाएं किसान के रूप में पहचानी जाने से वंचित रह जाती हैं।

मातम और सियासत

सारे देश में मातम का माहौल बना रहा पिछले हफ्ते। जहां भी पहुंचे शहीदों के ताबूत, वहां जनता ने अपना दर्द जताया उनके अंतिम संस्कार में भाग लेकर। और हमारे राजनेता हैं कि इस सार्वजनिक मातम में भाग लेने के बदले फिर से अपने राजनीतिक हित को आगे रखने लगे हैं और देश हित को पीछे। सो, पिछले हफ्ते कांग्रेस प्रवक्ताओं ने नरेंद्र मोदी पर आरोप लगाया कि जिस दिन पुलवामा में चौवालीस जवानों ने अपनी जानें गंवाईं उस दिन प्रधानमंत्री किसी फिल्म की शूटिंग में व्यस्त रहे। घटिया आरोप था, लेकिन भारतीय जनता पार्टी की तरफ से जो बयान आया इस दल के राष्ट्रीय अध्यक्ष का, वह उतना ही घटिया था। अमित शाह ने कश्मीर समस्या का सारा दोष जवाहरलाल नेहरू पर डाल दिया और यह भी कहा कि सरदार पटेल अगर बनते भारत के पहले प्रधानमंत्री तो शायद कश्मीर समस्या होती ही नहीं।

पहली बात तो यह है अमित शाहजी, कि कश्मीर की जो वर्तमान समस्या है उसका बहुत थोड़ा वास्ता है कश्मीर की ऐतिहासिक समस्या से। ऐतिहासिक समस्या का हल नेहरू की बेटी ने ढूंढ़ निकाला था शेख अब्दुल्ला के साथ 1975 में समझौता करके। अमन-शांति का माहौल बना रहा कश्मीर घाटी में और इसको भंग भी इंदिरा गांधी ने खुद किया फारूक अब्दुल्ला की सरकार को उसका कार्यकाल पूरा होने से पहले गिरा कर। याद दिलाया कश्मीरियों को एक बार फिर कि उनको लोकतंत्र का हक नहीं है। वैसे भी आदी थे कश्मीरी लोकतंत्र से वंचित रहने के। शायद ही कोई चुनाव हुआ होगा 1952 के बाद, जिसमें धांधली नहीं हुई।

अगली गलती इंदिरा गांधी के बेटे ने की, जब उन्होंने फैसला किया कि 1987 का विधानसभा चुनाव वे फारूक अब्दुल्ला के साथ गठबंधन में लड़ेंगे। विपक्ष की जगह जब खाली हुई, तो उसको भरने आया अलगाववादियों का गठबंधन मुसलिम यूनाइटेड फ्रंट के झंडे तले। जब इस गठबंधन के नेताओं को लगा कि चुनाव में उनको धांधली से हराया गया है, तो इस गठबंधन के कुछ नेता सीमा पार गए और वहां से हथियारबंद होकर लौटे।

माना कि पाकिस्तान ने हमेशा कश्मीर घाटी में अशांति फैलाने का काम किया है, लेकिन उनके प्रयास कामयाब न होते अगर भारत के राजनेताओं ने गलती पर गलती न की होती। इस कड़वे सच का सामना करने के बाद ही हम कश्मीर समस्या का हल ढूंढ़ सकने की उम्मीद कर सकते हैं।

वक़्त की नब्ज़

■ तवलीन सिंह

> मातम का माहौल आज तो है देश भर में पुलवामा के शहीदों को लेकर, लेकिन कितने दिन रहेगा यह मातम? जिस दिन खत्म हो जाएगा उस दिन हम फिर से भूल जाएंगे कि कश्मीर में समस्या राजनीतिक है और इसका हल भी राजनीतिक ही हो सकता है।

अफसोस कि मोदी सरकार ने भी कश्मीर में गलतियां की हैं, क्योंकि इस समस्या को लेकर स्पष्ट नीति नहीं रही है पिछले चार वर्षों में। ऐसा मैं अपनी तरफ से नहीं कह रही हूं, सेना के वरिष्ठ जरनैलों की तरफ से कह रही हूं। हाल में कश्मीर पर चर्चा हुई थी चंडीगढ़ के सैनिक साहित्य उत्सव में और इस चर्चा में मेरे अलावा तकरीबन सब बोलने वाले सेना में जरनैल रहे थे, जिनको कश्मीर का अनुभव था। इनमें सहमति थी कि कश्मीर समस्या का समाधान ढूंढ़ने के लिए कोई रणनीति नहीं है और बिना स्पष्ट रणनीति के हल ढूंढ़ना नामुमकिन है।

वर्तमान समस्या यह भी है कि इस समस्या को हिंदू-मुसलिम बना दिया गया है। ऐसा न होता तो पुलवामा की घटना के बाद जब हिंसक भीड़ों ने आम कश्मीरियों पर हमले शुरू किए तो उनको क्यों नहीं किसी बड़े राजनेता ने रोका? हिंसक भीड़ों में अक्सर शामिल थे अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद के नौजवान, सो सवाल है कि इनको भारतीय जनता पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष ने क्यों नहीं टोका? क्यों नहीं इनको समझाया कि भारत में हिंदू-मुसलिम सद्भावना की परंपरा पुरानी है। बहुत मजबूत रही है यह परंपरा। पिछले हफ्ते मैंने मुसलिम मंगणयार गायकों को कृष्ण के भजन गाते सुना, तो याद ताजा हुई इस देश के ताने-बाने की। इसको तोड़ रहे हैं वे लोग, जो मानते हैं कि पुलवामा के लिए हर कश्मीरी को दोषी ठहराने की जरूरत है।

ऐसा नहीं कि कश्मीर में हिंसा पाकिस्तान नहीं फैला रहा है। फैला रहा है दशकों से और अच्छा हुआ कि अब संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद ने भी पुलवामा के लिए पाकिस्तान का नाम लेकर टोका है। अच्छा हुआ कि फ्रांस और अमेरिका जैसे देश भी पाकिस्तान का नाम लेकर उसको दोषी ठहराने लगे हैं। ऐसा करवाने का श्रेय मोदी सरकार को तो जाता है, लेकिन कश्मीर घाटी में शांति लाने का श्रेय देना मुश्किल है, क्योंकि पिछले चार वर्षों में घाटी में हालात बद से बदतर हो गए हैं और दूर क्षितिज पर भी कोई हल नजर नहीं आता है।

मोदी सरकार की सबसे बड़ी गलती यही रही है कि कश्मीर के लिए कोई स्पष्ट रणनीति तय नहीं हुई है अभी तक। नतीजा यह कि जब कोई हिंसक घटना घटती है तो दिल्ली में बैठे हमारे शासकों को कश्मीर याद आता है कुछ दिनों के लिए। फिर जब वही अशांत शांति लौट आती है, तो कश्मीर को भूल जाते हैं।

मातम का माहौल आज तो है देश भर में पुलवामा के शहीदों को लेकर, लेकिन कितने दिन रहेगा यह मातम? जिस दिन खत्म हो जाएगा उस दिन हम फिर से भूल जाएंगे कि कश्मीर में समस्या राजनीतिक है और इसका हल भी राजनीतिक ही हो सकता है। हमारे राजनेता कहते आए हैं बहुत पहले से कि कश्मीर हमारा अंदरूनी मसला है, लेकिन जब भी पुलवामा जैसा कोई हादसा होता है, तो हम इस समस्या को अंदरूनी कहना भूल जाते हैं और पाकिस्तान को दोषी ठहराने लगते हैं। फिलहाल हमारे राजनेताओं को शर्म आनी चाहिए कि वे शहीदों की चिताओं पर अपनी राजनीतिक रोटियां सेंकने में लग गए हैं। ऐसे समय में भी उनको अपना राजनीतिक हित नजर आ रहे हैं, देश का हित नहीं।

हुक्का पानी बंद

यह कुर्बानी बेकार नहीं जाएगी! मोमबत्तियां लेकर निकल पड़े हैं लोग! सारा देश गुस्से में है!...

एक एंकर नारा देता है : भारत माता की जय!

दूसरा नारा देता है : वंदे मातरम्! वंदे मातरम!

एंकरों में नए-नए नारे बनाने और लगाने की प्रतियोगिता छिड़ी है। एक एंकर ने भी 'नारा' मार दिया तो ढेर हो जाना है पाकिस्तान को!

पुलवामा को हुए कई दिन बीत चुके हैं, लेकिन अपने एंकरों को चैन नहीं है।

हिंदी के एंकर तो वीररस के कवियों को मात करते हैं। एक अंग्रेजी वाला भी हिंदी में आकर वीररस की कविता सुनाने लगा है और हर बात पर 'भारत माता की जय' के नारे लगाने लगा है। अंग्रेजी गला जब हिंदी में आता है, तो महाप्राण ध्वनियां भी बेचारी अल्पप्राण हो उठती हैं।

एंकर चाहता है : तुरंत बदला! अभी इसी वक्त बदला! सबक सिखाना!

सीन कश्मीर से पालम एअरपोर्ट चला आता है। सैंतीस शहीदों के ताबूत सैंतीस तिरंगों में लिपटे एक महाशोक-सा रच रहे हैं। उनको एक एक कर सैन्य श्रद्धांजलि दी जा रही है। राहुल ने श्रद्धांजलि स्वरूप पुष्पचक्र उनके चरणों में रखा है और खड़े हो गए हैं। कुछ देर शोक ठहरा रहता है और पीएम की श्रद्धांजलि के बाद संपन्न होता है।

शोक के सीन अब शहीदों के शहरों में पहुंच गए हैं। चैनलों के लाइव कवरेज ने हर शहीद की विदाई को एक बड़े दृश्य में बदल दिया है। रिपोर्टर यह भी बताने लगते हैं कि इस शहीद के अंतिम दर्शन करने एक लाख लोग आए हैं, कि ढाई लाख आए हैं, कि पूरा शहर उमड़ पड़ा है।... कैमरे हों तो शहर क्या, पूरा देश उमड़ पड़ता है!

चैनलों में आकर शोक पहले पल से बदलेखोर बना हुआ है। शाम को दिल्ली के इंडिया गेट से पब्लिक नाम पर कुछ युवा सबको ऐसी-ऐसी लाइनें दे रहे हैं कि अगर उनको कमान दे दें, तो एक-दो क्षण में ही पाकिस्तान भस्म हो जाए! ऐसे में रिटायर्ड सैन्य अफसर बड़े काम आते हैं। उनको बोलते हम इस तरह सुनते हैं मानो पाकिस्तान को ठीक करने की सबसे अनमोल रणनीति उन्हीं के पास हो और कई तो वाकई बहुत गुस्से में बोलते हैं।

एक चैनल अपनी पिटाई कराने के लिए शुद्ध बेवकूफी छाप बहस छेड़ देता है कि इस हमले का जिम्मेदार कौन? पहले से सूचना थी, कार बीच में कैसे घुस आई, आतंकवादी तो कश्मीर का ही निवासी था, बाहर से कहां आया!

इसके बाद ऐसा कहने वाले की प्रेमपूर्वक ठुकाई कराके एंकर चैन पाता है कि देखा, अपने देश में तो पाकिस्तान के एजेंट तक आजाद हैं कि आकर कुछ भी बोल जाते हैं।

कांग्रेस को देर से अफसोस होता है कि हमने तो संकट की इस घड़ी में देश का, सरकार का साथ दिया और भाजपा चुनावी सभा करती घूम रही है?

इसके आगे कांग्रेस द्वारा अचानक खबर ब्रेक की जाती है कि पुलवामा की खबर पीएम को कब दी गई? एक एंकर कुछ चित्र दिखाता है, जो कारबेट पार्क के हैं।

पांचवें रोज राजनीति शहादत को भुलाने में लग गई है। राजनीतिक हिसाब करने की घड़ी आ चुकी है। कौन गद्दार है? सवाल उठाया जाने लगा है।

कौन है, जो कश्मीर के आतंकियों के साथ है? एंकर शिकायत करते हैं कि देखो न महबूबा ने हमले की निंदा की, न उमर अब्दुल्ला ने कंडेम किया! उल्टे वे कश्मीर से बाहर रह और पढ़ रहे कश्मीरियों की सुरक्षा के लिए चिंतित हैं। धिक्कार है। एक राज्यपाल कश्मीरियों के बायकाट की मांग कर चुके हैं! कश्मीरी निशाना बन रहे हैं, खबरें आ रही हैं, लेकिन जल्द ही एक मंत्री कह उठते हैं कि कश्मीरी छात्र एकदम सुरक्षित हैं। जबकि एक बहस में एक 'फेक न्यूज' एक्सपर्ट कहता है, गृहमंत्रालय का बयान मंत्री के बयान के विपरीत बात कहता है। क्या सच है, कोई नहीं जानता! यानी इस प्रसंग में 'फेक न्यूज' गढ़ी जा रही है!

इमरान के 'रिटेलियेशन' वाले संबोधन के आते ही एक अंग्रेजी एंकर इमरान के बोलने के बीच आठ-दस कट दिखा कर सिद्ध करने लगता है कि इमरान का बयान 'एक्सटेंपोर' नहीं, सेना-संपादित है। मगर पाकिस्तान का प्रवक्ता एंकर की ही हंसी उड़ाता रहता है। अंत में यह अंग्रेजी चैनल सगर्व घोषित करता है कि अब हम किसी पाकिस्तानी प्रवक्ता को अपने देश के खिलाफ अपने चैनल का दुरुपयोग नहीं करने देंगे!

ये क्या भैये! वह बिना बुलाए तो न आया होगा! अब जब उसने आपको रगड़ा तो आपको होश आया!

ऐसे ही एक हिंदी चैनल ने एक पकिस्तानी मोहतरमा को बिठा लिया और सब घेरने लगे। वह तो कुछ कम तैयारी से आई, वरना गरिया तो सकती ही थी!

एंकरों की वीरता की 'हिरिस' पाकिस्तान के जनरलों से तू तू, मैं मैं करके ही मिटती है। चैनल पैसे देकर उनको बुलाते हैं, फिर 'गाली-गाली' खेलते हैं! इसे कहते हैं 'मुचैटा' करना!

इतने में एक मंत्री जी ने एक रणनीतिक घोषणा कर दर्शकों को तसल्ली बख्शी कि हम तीन नदियों के पानी की दिशा बदल देंगे। फालतू पानी को पाकिस्तान में नहीं जाने देंगे, बल्कि पंजाब, हरियाणा, राजस्थान को देंगे। ऐसी तसल्लीबख्श खबर के आते ही एंकर चहकने लगे- वो मारा पापड़ वाले को। एक हिंदी चैनल चहका : अब प्यासा मरेगा पाकिस्तान! दूसरा बोला : पाकिस्तान का दाना-पानी बंद। जैसे गांव में कहते हैं : हुक्का पानी बंद! अब मरेगा प्यासा! दाने-दाने को तरसेगा!

एक अंग्रेजी एंकर दहाड़ता रहा कि अब तो उन शंकालुओं को यकीन हो गया होगा कि भारत बदला ले सकता है! क्या कमाल का बदला है सर जी!

बाखबर

■ सुधीश पचौरी

> एंकरों की वीरता की 'हिरिस' पाकिस्तान के जनरलों से तू तू, मैं मैं करके ही मिटती है। चैनल पैसे देकर उनको बुलाते हैं, फिर 'गाली-गाली' खेलते हैं! इसे कहते हैं 'मुचैटा' करना!